कबीर के साहित्य में निर्गुण राम (परम तत्व) की भक्ति

डॉ. प्रमोद कुमार मिश्र

जब ब्रह्म निर्गुण है, तो उसका निर्देश किया जाना असंभव है। इसी कारण ब्रह्म के विषय में बार–बार पूछे जाने पर बाध्य होकर बाष्कलि ऋषि ने मौनालम्बन धारण करके ही ब्रह्म से संबंधित प्रश्नों का उत्तर दिया।[1] गुणों के अत्यंत अभाव के कारण ब्रह्म का भावात्मक वर्णन नहीं हो सकता।[2] इसलिए पर ब्रह्म के वर्णन में श्रुति वाद्यों में 'न' अव्यय का इतना बाहुल्य दिखायी देता है। वृहदारण्यक उपनिषद् (3/6/6) के अनुसार वह अस्थूल, अनणु, अह्रस्व तथा अदीर्घ है। कठोपनिषद् (1/3/15) उसे अशब्द, अस्पर्श, अरुप, अव्यय, अरस, अगंधवत्, अनादि तथा अनन्त कहता है। ऐसा ही मत यज्ञवल्क्य ने 'अक्षर' के स्वरूप का विवेचन करते हुए गार्गी को उपदेशित करते हुए दिया था।[3] केनोपनिषद् में निष्प्रपञ्च ब्रह्म का सजीव वर्णन है–

यद् वाचाऽनभ्युदितं येन वागभ्युद्यते।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते।। (केनो0–15)

(अर्थात् जिसे वाणी कह नहीं सकती, परन्तु उसकी शक्ति से वाणी बोलती है, उसे ही तुम 'ब्रह्म' जानो। यह नहीं, जिसकी तुम उपासना करते हो।)

समस्या–

'भक्ति' द्वैतपरक होती है क्योंकि इसमें भक्त और भगवान् का द्वैत रहता है। 'निर्गुण' से अर्थ 'अद्वैत' का होना है। इसलिए निर्गुण की द्वैतपरक भक्ति नहीं हो सकती है। 'निर्गुण' की प्राप्ति ज्ञान–ध्यान के द्वारा की जाती है, न कि द्वैतपरक उपासना के द्वारा। अतः, 'निर्गुण भक्ति' परस्पर–विरोधी कही जाती है। यदि इस निर्गुण भक्ति को प्रेमा–भक्ति कहा जाय तो विरोधाभास और अधिक उग्र हो जाता है, क्योंकि प्रेम का विषय व्यक्तित्वपूर्ण सगुण तत्त्व ही होता है। पर कबीर की भक्ति विलक्षण है। इस भक्ति का परम लक्ष्य आत्माराम है जिसमें ध्यान, ज्ञान और आस्था की अवियोज्य साधना पायी जाती है, पर जिसमें द्वैतपरक भक्ति का भी स्थान है। कबीर की प्रेमाभक्ति वास्तव में भावभक्ति है जिसमें शारीरिक रागात्मक वृत्तियों तथा उनके बाह्य विषय का अभाव रहता है। इसलिए कबीरी प्रेमाभक्ति में प्रीति, विरह और मिलन वास्तव में राम में अटल आस्था का नाटकीय परिचय मात्र है। वास्तव में कबीरी भक्ति अंतिम रूप में न तो द्वैतपरक है और न निर्गुण राम अद्वैतवादियों के निर्गुण ब्रह्म हैं। कबीर की नारदीय भक्ति (क.ग्रं. पद 278) उनकी साधना की आधार भूमि में ही सीमित रहती है। यह उसकी साधना में गौण रहती है, न कि मुख्य। यह इसी से स्पष्ट होता है कि कबीर के राम अवतारी मर्यादा पुरुष नहीं है।

एक राम दशरथ के बेटा, एक राम घट–घट में बैठा,
एक राम का सकल पसारा, एक राम हैं सब से न्यारा।

ऐसा प्रतीत होता है कि हठयोग से प्रभावित होकर कबीर ने 'निर्गुण राम' को घटघटवासी समझकर इन्हें प्राप्त करने की बात कही थी। फिर कबीर की भक्ति में एक और विरोधाभास देखा जाता है। कबीर ने अवतारवाद और मूर्तिपूजा दोनों का विरोध किया है। पर पौराणिक कथाओं की भी चर्चा **'बोलन कै सुख कारनैं'** करते हैं और कभी–कभी तो आप एकदम सगुणोपासक भी हो जाते हैं।

'राजा अंबरीक कै कारणि, चक्र सुदरसन जारै,

दास कबीर कौ ठाकुर ऐसौ भगत की सरन उबारै। (क.ग्रं. पद 122)

कहा करौं केसैं तिरौं, भौ जल अति भारी,

तुम्ह सरणागति केसवा, राखि राखि मुरारि।

कहै कबीर सुनि केसवा, तूं सकल बियारी,

तुम्ह समांनि दाता नहीं, हंम से नहीं पापी। (क.ग्रं. पद 178)

माधौ मैं ऐसा अपराधी, तेरी भगति होत नहीं साधी।

तुम्ह कृपाल दयाल दमोदर, भगत बछल भौ हारी,

कहै कबीर धीर मति राखहु, सासति करौं हंमारी। (क.ग्रं. पद 191)

इसी प्रकार कबीर ने नृसिंह अवतार की कथा (क.ग्रं. पद 379) तथा शुकदेव, हनुमान इत्यादि भक्तों की चर्चा (क.ग्रं. पद 387) की है। इसलिए यह विरोधाभास दिखता है कि निर्गुण राम में अवतार–संबंधी पौराणिक कथाओं में आस्था कैसे संगत हो सकती है? इन विरोधाभासों को स्पष्ट करने के लिये 'निर्गुण राम' के स्वरूप तथा सगुण–निर्गुण के संबंध को स्पष्ट करना चाहिये।

सगुण–निर्गुण संबंध

सर्वप्रथम, कबीरी भक्ति में सगुण–निर्गुण के परस्पर–विरोध को स्वीकारना असंगत है। यह निम्नलिखित पद से स्पष्ट हो जाता है–

संतौ धोखा कांसू कहिये।

गुंण मैं निरगुंण निरगुंण मैं गुंण है, बाट छांड़ि क्यूं बहिये,

अजरा अमर कथै सब कोई, अलख कथणां जाई।

नाति सरूप बरण नहीं जाकै, घटि घटि रह्यौ समाई।

प्यंड ब्रह्मंड कथौ सब कोई, वाकै आदि अरु अंत न होई,

प्यंड ब्रह्मंड छाड़ि जे कथिये कहै कबीर हरि सोई। (क.ग्रं. पद 180)

अर्थात् सगुण और निर्गुण अवियोज्य है और सगुण में भी वही निर्गुण व्याप्त है।

अलख लखौं अलखैं लखौं निरंजन तोहि,

हम तो लखा तिहु में, तू क्यों कहा अलेख। (बीजक, साखी 351–352)

फिर निर्गुण व्यष्टि और समष्टि (प्यंड और ब्रह्मंड) में व्याप्त रहकर दोनों से अतीत भी है। पर वह प्रत्येक जीवात्मा के घटघट में पूरा बैठा हुआ है।

देखी तो सब कहत हैं, अनदेखी नहिं कोय,

अनदेखी तो सो कहै, भीतर पैठा होय।

(शिशुबोधिनी टीका, साखी दोहा 371)

बरन अबरन कथ्यो नहीं जाई, सकल घट रह्यौ समाई।[4]

अर्थात् उसमें कोई वर्ण नहीं है, पर उसे वर्णविहीन (गुणविहीन) भी नहीं कहा जा सकता है। क्यों?

एकते हुआ अनंत, अनन्त ते एकहि आए,

एकते परिचय भई, एकै माहि अनन्त समाए। (बीजक–कबीर, साखी 124)

इस संदर्भ में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने मार्मिक बात लिखी है। ''गोरखनाथ के योगमार्ग में वेदान्त, वेद, अद्वैत और निर्गुण ब्रह्म को द्वैताद्वैतविक्षण और सगुण–निर्गुण से अतीत परम तत्त्व की अपेक्षा छोटा समझा गया और कबीरदास में यह भाव ज्यों का त्यों रह जाता है। वस्तुतः कबीर के मत से भगवान् के निर्गुण होने का अर्थ सगुणनिर्गुणातीत होना होता है और यह दोनों बातें अर्थात् भगवान् को निर्गुण, निरंजन और गुणातीत कहना असंगत नहीं है। यह जानी हुई बात है कि भगवान् अलौकिक गणों के आश्रय है और इसीलिये लोक में जो बात परस्पर विरोधी दिखती है, वह भगवान् में संगत हुआ करती है।''[5] अतः, द्विवेदी जी के अनुसार निर्गुण राम का स्वरूप इस प्रकार हो सकता है–

1. वह द्वैतातीत है क्योंकि आप द्वैतपरक भक्त–भगवान् के द्वैत से अतीत हैं।
2. निर्गुण राम अद्वैत के निर्गुण ब्रह्म से भी अतीत है, क्योंकि आप गुणविहीन नहीं हैं।
3. निर्गुण राम अलौकिक एवं अनन्त गुणों के आश्रय है। इसलिये वह सगुण–निर्गुणातीत है।

कबीर का मत द्वैतातीत है क्योंकि आपके अनुसार आकारी देवताओं के द्वारा आकारी (ससीम) मानव का मोक्ष नहीं हो सकता है।

मरिगे ब्रह्मा काशी के बासी, शीव सहित मुये अबिनासी,
मथुरा मरिगे कृष्ण गुवारा, मनि मरि गये दशौ अवतारा,
मरि मरि गये भक्ति जिन ठानी, सगुण मांहि निर्गुण जिन्ह आनी।

(बीजक–कबीर, रमैणी 54)

अर्थात् साकारी देवताओं की पूजा से मोक्ष नहीं प्राप्त हो सकता है। मोक्ष वह स्थिति है जिसमें आवागमन का चक्र सर्वदा के लिये विनष्ट हो जाता है। हाँ, साकारी देवताओं की पूजा से सीमित लाभ हो सकता है, अर्थात् संकट–निवारण, अर्थ लाभ, जिज्ञासा–शांति और चित्त की विमलता (गीता 7.16) अंतिम मोक्षगति केवल निर्गुण राम की प्राप्ति से ही संभव होती है।

आकार की ओट आकार नहीं ऊबरै, सिव बिरंचि अरु विष्णु तांई।
जास का सेवक तास कौं पाइहै, इष्ट कों छाड़ि आगे न जाहीं।
पाप पुन बीज अंकूर जामैं मरै, उपजि बिनसै जेती सर्व माया।
प्रितम करता कहै परम पद क्यूं लहैं, भूलि भ्रम मैं पड़्या लोक सारा।
कहै कबीर राम रमिता भजैं, कोई एक जना गय उतरि पारा।।

(क.ग्रं. पद 199)

उपर्युक्त पदों के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष स्पष्ट होता है–

1. सगुण निर्गुण अवियोज्य हैं। (क.ग्रं. पद 180)
2. सगुण में सीमित रह जाने पर सीमित ही लक्ष्य प्राप्त हो सकता है, अर्थात् ऐहिक दुःख–निवारण, अर्थ–लाभ, क्षणिक, स्वर्ग–लाभ इत्यादि।
3. सगुणोपासना से मूर्तिपूजा को आश्रय मिलता है और इस मूर्तिपूजा से मानव भ्रम में भूलता रहता है।
4. केवल निर्गुण–प्राप्ति से ही अंतिम मोक्ष–प्राप्ति हो सकती है।
5. अतः, न तो सगुणोपासना से और न अद्वैत के निर्गुण ब्रह्म की प्राप्ति से मोक्ष हो सकता है, पर इनसे ऊपर और श्रेष्ठतर, द्वैताद्वैतातीत को प्राप्त करना चाहिये जिसमें सगुण–निर्गुण राम के स्वरूप की व्याख्या करनी चाहिये।

निर्गुण राम का स्वरूप

चूंकि शिव–शक्ति, निर्गुण अवियोज्य हैं, इसलिये निर्गुण को सगुण से पृथक करके नहीं विचारा जा सकता है। इसलिये अद्वैतवादी निर्गुण–संबंधी विचार एकांगी एवं अभावपरक होगा। गुणविहीन होने के कारण निर्गुण ब्रह्म के संदर्भ में केवल 'नेति–नेति' ही कहा जा सकता है। इस निर्गुण ब्रह्म की तुलना में सगुण भावात्मक है, पर सीमित, एकांगी और अपूर्ण है। अब शरीर कबीर के राम इन दोनों मतों से अतीत हैं। इसे भावाभाव–विनिर्मुक्त कहा जायेगा। पर यही बात नागार्जुन ने 'शून्य' के विषय कही है। पर कबीर के राम नागार्जुन का शून्य नहीं है। यह वह निर्गुण है जा सभी गुणों में व्याप्त रहकर भी उन सभी से अतीत है। इस प्रकार का विचार ऋग्वेद 10.90.1 (पुरुष–सूक्त) में आया है, जहाँ कहा गया है कि सहस्रशीर्ष आदिपुरुष समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त होकर इससे दस अंगुल अतीत भी है। कबीर के अनुसार निर्गुण राम सभी उदात्त गुणों के आश्रय हैं और फिर उन सब गुणों से कहीं अधिक परिपूर्ण और इस अर्थ में उनसे अतीत भी है। पाश्चात्य विचारक स्पिनोजा ने भी कहा है कि उनके परम द्रव्य में असंख्य और अपरिमित गुण हैं जिन में से प्रत्येक गुण उस परम द्रव्य को असीमित सिद्ध करता है। इसी प्रकार का विचार भी उक्तियों में पाया–

चार भुजा के भजन में भूमि परे सब संत,
कबिरा सुमिरै तासु को जाके भुजा अनंत। (हरिऔध, वचनावली 5)

इसलिये जितने भी गुण ईश्वर में निहित बताये जायेंगे, वे कबीर के अनुसार निर्गुण राम को परिपूर्ण न बताकर उसे निम्नतर कर देगा, जो पूर्ण है वह अपूर्ण हो जायेगा। जितना ही निर्गुण राम के गुणों का बखान किया जाय वह राम के तत्त्व को विनष्ट कर देगा।

बोलत बोलत तत्त नसाई।

यदि किसी अरबों के धनी को लखपति कहा जाय तो अरबों के धनी को नीचा दिखाना होगा, उसको बड़प्पन से नीचे गिराना होगा। उसी प्रकार किन्हीं भी और कितने ही गुणों से निर्गुण राम को विभूषित क्यों न किया जाय, उसे गुण–सम्राट से गुण–रंक करना होगा, गुण–समुद्र को गुणकूप बताना होगा, महान् को हीन एवं तुच्छ ठहराना होगा। राम में अपरिमित और इतने असंख्य गुण हैं कि मानव के लिये वे अकथ्य ही कहे जा सकते हैं।[6]

सात समद की मसि करौं, लेखनि सब बनराई,
धरती सब कागद करों, तऊ हरि गुण लिख्या ना जाइ।

(क.ग्रं. 38, साखी 5)

जाकी गति ब्रह्मौ नहिं जानी, शिव सनकादिक हारे,
ताके गुण नर कैसे पैहो, कहहिं कबीर पुकारे। (बीजक–कबीर, सबद 18)
सर्वरूप जग रहा समाई, रूप निरूप जाय नहिं बोली।
ग ग ग ग
अपरमपार रूप बहुरंगी, रूप निरूपन ताहि,
बहुत ध्यान कै खोजिया, नहिं तेहि संख्या आहि।

(बीजक–कबीर, रमैनी 77)

इसलिये निर्गुण राम नकारात्मक रूप में गुणविहीन नहीं है, पर समस्त ब्रह्मांड में व्यक्त होकर भी अव्यक्त ही कहे जा सकते हैं।

जानसि नहीं कस कथसि अयाना, हम निरगुन तुम्ह सरगुन जाना
मति करि हींन कवन गुन आंही, लालचि लागि आसिरै रहाई,
गुन अरु ग्यान दारु हम हींनां, जैसी कुछ बुधि विचार तस कीन्हा।

सन्दर्भ

1. शंकरभाष्य 3/2/17
2. वृहदारण्यक श्रुति (4/4/22) के अनुसार– स एव नेति–नेति आत्मा।
3. वुहदारण्यक उपनिषद् (3/8/8)
4. डॉ0 राजेश्वर प्रसाद क. ग्रं. रमैणी 11
5. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर, पृ0 69; फिर देखें पृ0 102, 181
6. हमें याद रखना चाहिये कि भगवत महापुराण 10.14.67 के अनुसार भगवान् के सगुण रूप को गिन सकना सम्भव नहीं है पर ससीम में असीम को पा लेने की ललक है और असीम भक्त–वत्सल भगवान् भी ससीम को गले लगाने के लिये आतुर रहते हैं। देखें हजारी प्रसाद द्विवेदी।

प्रवक्ता– एम0ए0एस0पी0जी0 कॉलेज
इलाहाबाद राज्य विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
उत्तर प्रदेश, मो0–7347751856

●●●●●●